ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. NO.- 266-270
ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- I, Issues-23, YEAR- Jan.-March-2022

भवभूति–प्रणीत उत्तररामचरित में नाटकीय औदात्य

डॉ0 त्रिपुरारि कुमार ठाकुर
सहायक आचार्य– संस्कृत विभाग, श्री सुष्टि बाबा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बलिया (उ0प्र0), भारत

Received- 04.03.2022, Revised- 07.03.2022, Accepted - 11.03.2022 E-mail: aaryvart2013@gmail.com

सारांशः – *महाकवि भवभूति संस्कृत–नाट्य साहित्य के विलक्षण विभूति हैं। नाट्य–साहित्य के कवियों की प्रथम श्रेणी में पांक्तेय रसभावप्रसूति महानुभूति आचार्य भवभूति स्वकीयाद्वितीय–प्रतिभा–कला के द्वारा शाश्वत सनातन भारती का साज– शृंगार किया है। उनका रससिक्त वाङ्मय युग–युगों से सहृदयों को अलौकिक आनन्द से आप्यायित करता आ रहा है। उनकी इन्हीं विशेषताओं से प्रभावित होकर किसी भावुक समालोचक के हृदयरूपी तन्त्री को झंकृत कर उद्गृत उदगार है कि– "कवयः कालिदासाद्याः भवभूतिर्महाकविः"*

कुंजीभूत शब्द– संस्कृत–नाट्य, साहित्य, विलक्षण, प्रथम श्रेणी, पांक्तेय, रसभावप्रसूति, प्रतिभा–कला, शाश्वत

संस्कृत वाङ्मय में बाणभट्ट के पश्चात् सम्भवतः भवभूति ऐसे कवि हैं जिन्होंने अपनी नाट्यकृतियों के आमुखों में अपने वंश आदि के सम्बन्ध में विवरण प्रस्तुत किया है। महावीरचरित, मालतीमाधव तथा उत्तररामचरित में क्रमशः इन विवरणों का क्षीणभाव ही दृष्टिगोचर होता है। उपलब्ध विवरणानुसार इनके पूर्वज दक्षिणापथ में विदर्भ के अन्तर्गत पद्मपुर नामक नगर निवासी थे। उनका गोत्र कश्यप था तथा वे कृष्णयजुर्वेद की तैत्तिरीयशाखा को मानते थे। वे पंचाग्नियों का आधान करने वाले, चरणगुरू , पंक्तिपावन, चान्द्रायणादि धार्मिक नियमों के पालक, सोमपान करने वाले तथा उदुम्बर नामक ब्रह्मवादिन थे। अपने पूर्वजों के गुण–निधान में भवभूति ने जिन विशेषणों का प्रयोग किया है, उनसे स्पष्ट है कि भवभूति का वंश एवं परिवार वैदिक आचार–विचार, यज्ञ–जाप, ब्रह्मविद्या के अध्ययन–अध्यापन का केन्द्र था। भवभूति की पाँचवीं पीढ़ी पहले 'महाकवि' हुए थे जिन्होंने वाजपेय यज्ञ किया था। भवभूति के पिता 'नीलकण्ठ' तथा माता 'जातुकर्णी' थी।

भवभूति के समय तथा वास्तविक नाम के विषय में सुधीजनों की मतमति मतैक्य न हो, किन्तु उनकी नवनवोन्मेषशालिनी मेधा व प्रतिभा मनीषि–मतैक्य ही रहा है। इन्होंने न केवल पद– व्याकरण, वाक्य– मीमांसा तथा प्रमाण– तर्कशास्त्र जैसे शास्त्रों को शस्त्र बनाया अपितु स्व–लेखनी को भी एतदनुगामिनी में प्रवृत्त किया। महाकवि भवभूति ने प्रतिभावल्लरी का वपन आनन्दनिष्यन्दिकला में ही किया है, जिससे वह पल्लवित व पुष्पित होती हुई सहृदयों के लिए मधुरमकरन्दरस के अक्तरण में सर्वविध्समर्थ हो सकी है। संस्कृत साहित्य की परम्परा सामान्यतः इन्हें तीन नाटक के यशस्वी नाटककार के रूप में स्मरण करती है। किन्तु यत्रा–तत्रा उनके कुछ ऐसे श्लोक भी प्राप्त होते हैं जिनका इन त्रिविध नाटकों में भावाभव ही दिखता है। भवभूति की उर्वर काव्यप्रतिभा को देखकर यह तनिक भी असम्भव प्रतीत नहीं होता कि उन्होंने इन नाटकों के अतिरिक्त भी कुछ काव्यकृतियों का प्रणयन किया होगा। अन्यत्र सूक्तिग्रन्थों में उपलब्ध ये श्लोक भवभूति की अन्य कृतियों से सम्बद्ध है जो कृति अन्य संस्कृत ग्रन्थों की तरह कालकवलित हो चुकी है। अन्यथा नाटकीय महत्ता की मूलाधारिणी कला ही जिसको वशीभूत हो, ऐसी कलाप्रसूतप्रतिभा की इयत्ता त्रिविध नाटक हो, यह अवसान नहीं अपमान है।

भवभूति के उपलब्ध नाट्य ग्रन्थ– महावीरचरित, मालतीमाधव एवं उत्तररामचरित हैं। महावीरचरित तथा उत्तररामचरित– जिनमें से प्रत्येक सात अंको में निबंद्ध है– में कवि ने रामायण के चरितनायक राम के प्रायः सम्पूर्ण जीवनवृत्त को नाटकीय इतिवृत्त रूप प्रदान किया है प्रथम में जीवन के पूर्वभाग एवं द्वितीय में जीवनवृत्त के उत्तरभाग को मूर्तिमान किया है।

मालतीमाधव दस अंकों का एक प्रकरण ग्रन्थ है जिसकी कथावस्तु प्रायः कविकल्पनाप्रसूत है। इन तीनों नाट्यकृतियों में सम्भवतः महावीरचरित भवभूति का प्रथम तथा उत्तरामचरित अन्तिम प्रथित नाटक है। मालतीमाधव की स्थिति उभयोक्त के मध्य ही प्रतीत होती है। एतत्कृति भवभूत्यध्कित कृति है इसमें रंचमात्रा शंका की आशंका असन्देहित ही है।

महावीरचरित तथा मालतीमाध्व के सोपानोपक्रमणोपरान्त उत्तररामचरित के आरोहन वेला में ऐसा प्रतीत होता है कि, मानों हम शाद्वल उपत्यका के मार्ग का त्याग करके अपने विराट् गौरव एवं प्रशान्त सुषमा में अवस्थित हिमालय के उच्च शिखरों से गुजर रहें हों। व्यक्ति–मानव एवं समष्टि–मानव की गहनतम अनुभूतियों, तीव्रतम संवेगों तथा द्वन्द्वाविष्ट–विकट–मानसिक संघर्षों के जैसे नाटकीय चित्र यहाँ प्राप्य है, वैसे अन्यत्र किसी दूसरी नाट्यकृति में भावप्रतियोगी रूप ही रहा है। भवभूति के कीर्तिस्तम्भ का प्रमुख आधर उत्तररामचरित है, उनके शेष दोनों नाटकों की महत्ता इसमें भी है कि वे उत्तररामचारित की उपयुक्त पृष्ठभूमि बनकर आते हैं। महावीरचरित में कवि ने यदि राम के महावीरत्व को विकेन्द्रित कर के उसे पृथक्–पृथक् भागों में सम्पुष्ट किया है, तो उत्तररामचरित में उसे केन्द्रित करके उसके समन्वित औदात्य को पूर्ण एवं परिपाक बनाया है।

कवि ने उत्तरामचरित नाटक का नामकरण विचार पूर्वक किया है। कवि घटित यह शीर्षक नाटकीय घटनाचक्र पर पूर्णरूप

अनुरूपी लेखक/संयुक्त लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- I, Issues-23, YEAR- Jan.-March-2022

से प्रकाश डालता है। यह शीर्षक "नाम कार्यं नाटकस्य गर्भितार्थप्रकाशनम्" इस नाटकीय विधन का पूर्णत्वेन पालन करता है। 'उत्तरामचरित' की व्याख्या अधेलिखित प्रकार से की जा सकती है:–

1. 'उत्तरं रामस्य चरितं यस्मिंस्तत्' अर्थात् जिसमें राम का उत्तर चरित वर्णित है। राम का पूर्वचरित महावीरचरित में उपनिबद्ध है, अतः उससे आगे का चरित (उत्तरचरित) इस उत्तररामचरित में प्रतिपादित किया गया है।

2. 'उत्तरम् उत्कृष्टं रामस्य चरितं यस्मिंस्तत्' अर्थात् जिसमें राम का उत्कृष्ट चरित वर्णित है। राम के चरित की यह उत्कृष्टता है कि लोकाराधन के लिए प्राणों से भी प्रिय साध्वी सीता का परित्याग कर देते हैं तथा अश्वमेघ यज्ञानुष्ठान में सुवर्णमयी सीता की प्रतिकृति को गृहिणी के रूप में प्रतिष्ठित करते हैं।

3. 'उत्तरम् उत्कृष्टं रामायाः (सीतायाः) चरितं यस्मिंस्तत्'– अर्थात् जिसमें सीता का चरित सर्वोत्कृष्ट है। सीता के चरित की उत्कृष्टता विभिन्न पात्रों के द्वारा बतलायी गयी है।

4. 'रामा च रामश्च रामे, तयोः सीतारामयोः (रामारामयोः वा) उत्तरं चरितं यस्मिंस्तत्'– अर्थात् जिसमें राम और सीता का उत्तरचरित या उत्कृष्टचरित वर्णित है।

5. 'उत्तरन्ति संसारसागरतो जनाः येन तादृशं रामचरितम्'–अर्थात् जिस राम के चरित से लोक संसार सागर से पार उतर जाते हैं।

6. 'उत्तरो गोपतिर्गोप्ता' विष्णुसहस्त्रानाम के इस श्लोक में प्रयुक्त उत्तर शब्द 'विष्णु' वाचक है। इस प्रकार–'उत्तरश्चासौ रामः =उत्तररामः (विष्णुरूपः रामः) तस्य चरितम्'– अर्थात् विष्णु के अवतार राम का चरित, ऐसा उत्तररामचरित।

7. 'उत्तरः शिवः इव रामस्य चरितं यस्मिंस्तत्'– अर्थात् शिव के समान जिसमें राम का चरित वर्णित है। भगवान् शिव ने भी राम की तरह सती का परित्याग किया था।

8. जिसमें राम और सीता का अन्त में संयोग हो जाता है। अतः वाल्मीकि रामायण में वर्णित कथा से उत्कृष्टता आ जाती है, ऐसा उत्तररामचरित।

कवितावनितासौभाग्यविभूति महाकवि भवभूति ने स्वकीयकृतकृति में 'चरित' शब्दाभिधन किया है, जिसका अर्थ जीवन (LIFE) है। वस्तुतस्तु इसमें लंकाविजयेापरान्त राम का जीवन चित्रित है। चरित शब्द का अर्थ चरित्र (CHARACTER) नहीं है। शाब्दिक निर्माणदृष्ट्या 'उत्तररामचरितमधिकृत्य कृतन्नाटकम्' इसे अर्थ में 'अधिकृत्य कृते ग्रन्थे' सूत्र से 'अण्' प्रत्यय तथा 'लुवाख्यायिकाभ्यो बहुलम्' से 'अण्' का लोप होकर 'उत्तररामचरितम्' शब्द निष्पन्न होता है।

महाभारत के अवलोकन से स्पष्ट हो जाता है कि राम–कथा न केवल कोशल प्रदेश में प्रचलित थी वरन् इसका प्रचार प्रसार पश्चिम की ओर भी हो चुका था। हरिवंश पुराण से ज्ञात होता है कि रामायण की कथा आधारित नाटकों का अभिनय प्राचीन काल में भी हुआ करता था। राम कथा प्रारम्भ से ही भारत की संस्कृति में इतनी फैल गयी कि राम ने उस समय के तीन प्रचलित धर्मों में एक निश्चित स्थान प्राप्त किया। ब्राह्मण–धर्म में विष्णु अवतार, बौद्ध धर्म में बोधिसत्व तथा जैन धर्म में आठवें बलदेव के रूप में। इसी श्रृंखला में संस्कृत–साहित्य के प्रत्येक शाखा में, अन्य भारतीय भाषा–साहित्य में, भारतीयेतर साहित्य में भी एतदाधारित साहित्य–प्रणयन की गति अबाध रही।

यद्यपि यह निश्चित नहीं है कि भवभूति के उत्तररामचरित की कथा वस्तु का मूलाधर वाल्मीकि रामायण ही है फिर भी इसकी निकटता वाल्मीकि रामायण के उत्तरकाण्ड से प्राप्त होती है। कतिपय सुधीजन उत्तरकाण्ड को ही प्रक्षिप्त मानते हैं। नाटककार के कलात्मक दायित्व की परिसीमा है, जो उन्हें कथावस्तु में परिवर्तन एवं परिधर्वन के लिए विवश करती है। उत्तररामचरित में भवभूति का मूल उद्देश्य राम और सीता के पावन चरित में लगे मिथ्या दोष को परिमार्जित कर उन्हें एक आदर्श व्यक्तित्व प्रदान करना है। तदर्थ रसभावप्रसूति–सम्भूति–भवभूति ने अपनी उर्वरा कल्पना शक्ति से अनेक नाट्यबीजों को अंकुरित किया है, जिससे उनकी मौलिक सूझ–बूझ से सिचिंत अपूर्व भावना सहकार– सौरभ से सुरभित काव्यकलाकानन ललितनाट्य वाटिका प्रपफुल्लित हो उठी है, जो कि सहृदयों के सरस मनोमयूरों को आलादित किये बिना नहीं रह सकती।

नाटक के प्रथम अंक से ही भवभूति की कल्पना उड़ान भरती है। नाटक के प्रारम्भ में ही कवि ने सीता के लोकापवाद एवं तज्जन्य परिणामों का मौन संकेत कर दिया है। गुरूजनों तथा माताओं को महर्षि ऋष्य श्रृंग के आश्रम भेजना, अष्टावक्र के द्वारा प्रेषित वशिष्ठ का सन्देश से राम को अपने कर्तव्य के प्रति जागरूता उत्पन्न करना, ये सभी व्यापार समेकित रूप में सीता निर्वासन के निमित्त का ही निर्माण करता है। वाल्मीकि के राम वंश–मर्यादा की रक्षा के लिए सीता परित्याग करता है जो निश्चय ही राम के लोक–वन्दित चरित्र को अनुदात्त तथा संकीर्ण बना देता है किन्तु भवभूति के राम लोक–मर्यादा की रक्षा के लिए सीता को निर्वासित कर अपनी लोकव्रत के कठोर दायित्व का निर्वाह करते हैं जिससे उनकी प्रजानुरंजन की प्रतिज्ञा भी सफल होती है।

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- I, Issues-23, YEAR- Jan.-March-2022

शम्बूक वध की कथा यद्यपि रामायण में भी मिलती है किन्तु वहाँ प्रसंग एवं कलात्मकता का महत्त्व नहीं रह जाता है। इसी वध की प्रख्यात घटना का सहारा लेकर भवभूति ने राम को उस पंचवटी में लाकर खड़ा कर दिया है, जिन्हें विस्मृत करना राम के लिए असम्भव है। उस प्रस्रवण पर्वत को राम भला कैसे भुला सकते हैं यहाँ सीता विषयक रति की प्रकृष्टता रही हो। अतएव वहाँ वे सीता के सहवास की स्मृतियों से विहवल होकर अपनी मनोव्यथा की अभिव्यक्ति निर्बाध रूप से करते हैं। उस अवस्था में राम अपने सभी सम्बन्धें तथा बान्धवों को व्यर्थ बताते हुए सीता–विलाप के आलाप में ही संलग्न दीखते हैं।

सीता–निर्वासन के शोक एवं तन्निहित मार्मिकता, तथा राम और सीता के दाम्पत्य में स्नेह के गाम्भीर्य का अंकन कर भावी वियोग की असहनीयता के परिपाक हेतु भवभूति ने वाल्मीकि रामायण से पृथक् चित्रादर्शन की नाटकीय योजना प्रस्तुत की है। चित्र दर्शन में कवि ने नाट्यक्षेत्रीय उन समस्त वीजों का वपन किया है, जो शनैः शनैः अंकुरित होकर क्रमशः पल्लवित व पुष्पित होकर नाटकीय विकास–व्यापार में सहायक होते हैं। सीता–विषयक करुणा तथा प्रजाविषयक राजधर्म को प्राणवन्त बनाने के लिए जो प्रथम कार्य भवभूति ने किया है, वह राम और सीता के गहनतम एवं नितान्त स्थिर दाम्पत्य प्रणय के मसृण चित्रों की उद्भावना। सत्रह प्रधान चित्रों के माध्यम से कवि ने एक ही साथ कई नाटकीय अर्थों की सिद्धि की है। पहला चित्र जृम्भकास्त्रों के दिव्य रूपों का है जिनसे नाटक के आदि में ही अद्भुतत्त्व की सृष्टि की जाती है। भवभूति की विशेषता यह है कि नाटकारम्भ में ही अद्भुत, विप्रलम्भ तथा करुण की भावात्मक संसक्ति के माध्यम से जिस नाटकीय भाव धरा को उन्नयन्न किया है, नाटक के अन्त उसकी कलात्मक परिणिति भी इन्हीं तत्वों के माध्यम से होती है। आद्यन्त का यह अपूर्व समवाय उत्तररामचरित्रा के वैयक्तिक स्वरों में से एक है जो इस नाटक को भाव–संगठन की दृष्टि से महत्तर प्रतिष्ठा प्रदान की है तथा नाटकीय औचित्य एवं औदात्य को भी सम्पुष्ट किया है।

चित्र में जैसे–जैसे अतीत के पृष्ठ खुलते जाते हैं, सीता के प्रति राम का संवेग पराकाष्ठा की ओर बढ़ता जाता है। महाकवि भवभूति ने स्पष्ट कारणों से सीता के प्रति राम के प्रीतिभाव को जितना उच्छलित किया है, उतना राम के प्रति सीता के अनुरक्ति के स्वर को उदात्त नहीं किया है। वस्तुतस्तु नाटककार का प्रधानोद्देश्य राम के चरित्र को बचना है, सीता तो पीड़िता रही हैं– उनके सुविदित विशुद्ध चरित्र एवं पतिपरायणता पर प्रश्नचिन्ह उठाने का न तो कोई अवकाश है, न प्रयोजन। इस प्रकार चित्रदर्शन की योजना राम द्वारा सीता निर्वासनोचिताधर ही तैयार करता है, अन्यथा इसके अतिरिक्त सीता को एक झटके से निर्वासन अनाट्य ही था।

वाल्मीकि के उत्तरकाण्ड की कथा दुःखान्त है– सुसज्जित सभा के मध्य सीता पृथिवी के विवरण में प्रवेश कर जाती है और राम संलाप–विलाप ही करते रहते हैं। किन्तु महाकवि भवभूति ने नाटक के अन्त में राम और सीता का सुखद मिलन कराकर न केवल नाटक को सुखान्त किया अपि तु भरत मुनि के आदेश को भी मूर्तिमान किया। भवभूति सुखान्त कर यह दिखाना चाहता है कि किस प्रकार दाम्पत्य प्रेम का शुद्ध रूप मंगलमय परिणति को प्राप्त करता है। यदि विशुद्ध दाम्पत्य पवित्र हार्दिक प्रणय है तो उसका दुःखद विवर्त किस प्रकार सुखद परिणिति को प्राप्त होता है, यह स्पष्ट कर दिया है। भवभूति की सहज प्रीति सृष्टि ने विधिसृष्टि को उपेक्षित कर आचार्य मम्मट के "नियतिकृतनियमरहिताम्....." इत्यादि प्रतिज्ञा वचन को सहजता से चरितार्थ किया है जो कवि की अनुपम एवं असाधरण कल्पना कला का ही परिणाम है।

दाम्पत्य प्रणयभाव के आदर्श चित्रकार के रूप में भी महाकवि भवभूति सिद्ध हस्त हैं। भवभूतिकृतकृति के आमुखों से मुखरित मुखमुखी मत यद्यपि उनके स्वकीय दाम्पत्य विषयक प्रश्नों को उद्वेलित करता है किन्तु कुछ सप्रमाण इदमित्थं कहना कट्टरपन्थी पण्डित समाज का दुःसाहपूर्ण व्यापार मात्रा ही है। वस्तुतः भवभूति की कृतियों में जिस आशावाद एवं पवित्र आदर्शवाद का उदात्त स्वर प्रखरित नजर आता है उससे उसका जीवन सर्वथा श्रृंखलित, मर्यादित, प्रशान्त एवं सौहार्दपूर्ण ही प्रतीत होता है। इच्छापूर्ति मात्र ही जिसका साध्य हो उन में एतद् विशिष्ट निष्ठा व तन्मयता नहीं देखी जा सकती। अगर भवभूति का दाम्पत्य जीवन सर्वथा विषम एवं विषण्ण ही होता तो नारी मात्रा के प्रति उनका दृष्टिकोण इतना उदार, उज्ज्वल एवं सुप्रसन्न नहीं हो सकता था। नारी के प्रति गौस्वामी तुलसीदास जी को इतनी संकुचित, कलुषित एवं अनुदार दृष्टि के मूल में उनके अपने दाम्पत्य प्रणयभाव विसंवादी स्वर ही गूंज रहा है। विक्षुब्ध मानव आदर्श चित्रकार कभी नहीं हो सकता, अगर वह चित्र बनाने के लिए उद्यत भी हो तो उसकी मानसिक नीरवता की अवसादपूर्ण रेखाएँ चित्र में अवश्य उभर आयेगी। उत्तररामचरित में दाम्पत्यभाव निश्चय ही कवि की अभावात्मक अनुभूति की उपज नहीं अपि तु भावात्मक अनुभूति से छनकर निकले प्रतीत होते हैं। भवभूति की कृति के अध्यनोपरान्त एक तपःपूत, सुसंस्कृत विपुल एवं संस्कारस्नात लोक समक्ष होता है, उसमें कवि के निस्संग मानस का अपवाद एवं नीरस अवकाश व्यर्थ क्षण नहीं बल्कि एक व्यापक मनोयोग के साथ जीवन एवं साहित्य में सानन्द विचरण की दिव्यनिष्ठानीत लीला विद्यमान है। भवभूति की कला में नारी गृहलक्ष्मी एवं देवी के पद पर समासीन समस्त मातृमहिमा से मण्डित एवं विश्वन्दनीया है।

नारी के प्रत्येक रूपों ने कवि के स्वाध्यापूतमानस को आवर्जित अश्वय किया है फिर भी पराजित नहीं। शारीरिक सौन्दर्य

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- I, Issues-23, YEAR- Jan.-March-2022

की अपेक्षा उसके अनाविल शील एवं सद्गुणों ने ही कवि मानस को अधिक प्रभावित एवं उत्प्रेरित किया है। कालिदास के रूप की सुरा भवभूति की कला में शील की सुधा बन गयी है। वह 'गेहे लक्ष्मी' है, पवित्रा जीवनसंगिनी है और उसका प्रत्येक स्पर्श अमृततुल्या है। उसका प्रेम भाग्य से ही किसी समानुष को प्राप्त होता है। कवि की दृष्टि में विवाह केवल विलास का साधन नहीं अपितु कर्त्तव्य पालन का एक स्वर्णिम उपाय है। वह त्याग और तपस्या के लिए हैं "प्रजायै गृहमेधिनाम्" उसका उज्ज्वल आदर्श है। दम्पती के अन्तःकरण की स्नेहमय आनन्द ग्रन्थि ही सन्तान है। ऐसे पवित्र मनीषि के दाम्पत्य प्रणयचित्रों को अभावात्मक अनुभूति का नीरवनिष्करुण उच्छ्वास कहना अनुचित ही नहीं, जधन्य भी हैं। विश्वास की धवलधरा में आपाद मस्तक निमज्जित होकर भवभूति ने जो कुछ दिया निस्सन्देह वह साहित्य संसार की एक अक्षय निधि है। भवभूति के नाटकों में विदूषक जैसे विनोदी पात्र का नितान्त अभाव उनके व्यक्तित्व गाम्भीर्य के प्रबल परिचायक है किन्तु उनकी गम्भीरता में श्मशान की नीरवता नहीं अपितु दण्डाकारण्य के वन–पर्वतों की व्यापकता एवं विद्रुपता का नैसर्गिक सौन्दार्य विद्यमान है। इस व्यक्तित्व गाम्भीर्य के निर्माण में उनके निगमागम पाण्डित्य का पुण्य प्रभाव तो है ही, साथ ही जीवन और साहित्य के प्रति उनके उनके नवीनदृष्टिकोण के कारण तत्कालीन कट्टरपन्थी पण्डित समाज की कटूक्तियों तथा उपेक्षाओं का मनोवैज्ञानिक योगदान भी कम महत्वपूर्ण नहीं है।

उपसंहार– महाकवि भवभूति ने शैली व शील में मान एवं स्वाभिमान का, निष्ठा एवं आशा का गौरवपूर्ण सम्मिश्रण किया है। विराट्, विद्रूप, भीषण और भयावह दृश्यावलियों के मध्य यत्र–तत्र भवभूति के तपःपूत मानस–कल्प की दिव्यसुधाधारा भी अविरामगति से प्रवाहित हुई जो इनके कविकर्म को शाश्वत मूल्य तथा अक्षय सौन्दर्य प्रदान करती है। भवभूति का अध्ययन अपार था और प्रतिभा बहुमुखी। अतः वाल्मीकि रामायण के अतिरिक्त कुछ भिन्न स्रोतों से उन्होंने काव्यबीज को लेकर उत्तररामचरित की कथावस्तु को उपबृंहित किया है।

जहाँ तक नाटकीय संविधान शैली–शिल्प का सम्बन्ध है वह कालिदास के नाट्य शिल्प से प्रभावित एवं अनुरजिंत प्रतीत होता है। कालिदास की शकुन्तला तथा भवभूति की सीता– दोनों का चरित्रा एक ही रूप में विकसित होता दिखाई देता है। दोनों ही देवियों का अकारण पति द्वारा प्रत्याख्यान होता है तथा दोनों ही अपने पति से परित्यक्त होकर तपस्विनी की तरह माँ की गोद में ही जीवन व्यतीत करती हैं। दोनों को ही परित्यक्तावस्था में ही पुत्र रत्न की प्राप्ति होती है जो पुनः दोनों ही जगह वियुक्त दम्पती के संयोग में सहायक सिद्ध होता है। दोनों ही देवियों को ऋषि आश्रम में ही अपने पति से पुनर्मिलन होता है–

शाकुन्तल में महर्षि मारीचि का आश्रम है तो उत्तररामचरित में भगवान् वाल्मीकि का। इसी प्रकार उत्तरामचरित में छाया से आवरित सीता के उपर कालिदास की सानुमती की छाया देखी जा सकती है। यद्यपि कोई भी कवि या नाटककार अपनी परम्परा का ऋणी होता ही है और इस दृष्टि से भवभूति भी इस नियम के अपवाद नहीं हो सकते, फिर भी इनका वैशिष्ट्य इस तथ्य में निहित है कि इन्होंने इन समस्त बाहय तत्त्वों को अपने उदार–उदर में इस तरह पचा लिया है कि वे भवभूति की अपनी काव्यसम्पत्ति हो गयी है, उसमें कहीं भी वासीपन या विदेशीपन का बोध नहीं होता।

संदर्भ

1. अनुवाद कदमानाम–अष्टा–2.4.3.
2. राम– उत्पत्तिपरिपूतायाः किमस्या पावनान्तरै। उ. च. 1.13.
   अरुन्धती – गुणाः पूजास्थानं गुणिषु न च लिङ्गं न च वयः। उ.च. 4.11.
   भागीरथी– जगन्मङ्गलमात्मानं कथं त्वमवमन्यसे? आवयोरपि यत्प्रसङ्गात् पवित्रत्व प्रकृष्यते। उ.च. 7.
3. रामायणं महाकाव्यमुद्देश्ये नाटकीकृतम्। जन्मविष्णोरमेयस्य राक्षसेन्द्रवधेप्सया।। विष्णु पर्व – अ. 63.
4. सर्वथा व्यवहर्तव्यं कुतो ह्यवचनीयता । यथा स्त्रीणां तथा वाचां साधुत्वे दुर्जनो जनः।। उ. च. 1.5.
5. स्नेहं दयां च सौख्यं च यदि वा जानकी मपि। आराधनाय लोकस्य मुञ्चतो नास्ति में व्यथा।। उ. च. 1.16.
6. व्यर्थ यत्र कपीन्द्रसख्यमपि मे वीर्यं हरीणां वृथा.... सौमित्रेरपि पत्रिणामविषये तत्र प्रिये! क्वासि मे ।। उ. च. 3.45.
7. सर्वान् समागतान् दृष्टवा सीता काषायवासनी। अब्रवीत् प्राञ्जलि र्वाक्यमधोदृष्टिश्वांमुखी ।। उ. काण्ड– 97.14.
8. उत्पत्स्यते मम कोऽपि समानधर्मा कालो ह्यं निरवधिर्विपुला च पृथिवी ।। मा. मा.–1.6.
9. इयं गेहे लक्ष्मीरियममृत वतिर्नयनयो– रसावस्थाः स्पर्शो वपुषि बहुलश्चन्दनरसः । उ. च. 1.38.
10. अद्वैतं सुखदुःखयोरनुगतं सर्वास्वस्थासु य.....भद्रं तस्य सुभानुषस्य कथमप्येकं हि तत्प्रार्थ्यते। उ. च. 1.39.
11. अन्तः करणतत्त्वस्य दम्पत्योः स्नेहसंश्रयात्। आनन्दग्रन्थिरेकोऽयमपत्यमिति पढ्यते।। उ.च. 3.17

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- I, Issues-23, YEAR- Jan.-March-2022

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. उत्तररामचरित– डॉ0 शिवबालक द्वेविदी, हंसा प्रकाशन, जयपुर–2009.
2. भवभूति– अमृता रानी, भारतीय ज्ञानपीठ, लोदी रोड़, नई दिल्ली. 2012.
3. भवभूति और उनकी नाट्यकला–अयोध्या प्रसाद सिंह, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
4. उतररामचरित की शास्त्रीय समीक्षा–डॉ0 सत्यनारायण चौध्री, चौखम्बा ओरियन्टालिया, दिल्ली–1980.
5. राम–कथा, बुल्के, हिन्दी परिषद् विश्वविद्यालय प्रयाग–1950.
6. भवभूतिः व्यक्तित्व और उनके पात्रा– डॉ0 अंजलि ओझा, राजपाल एण्ड सन्ज– 1984.

*****